पाखी

सृजन की उड़ान

जून 2026, मूल्य : 40

पहले एक गौरैया होतीं थीं
एक आदमीं होता था
लेकिन आदमीं इतना ऊँचा उड़ा
कि गौरैया खो गई!
पहले एक पहाड़ होता था
एक आदमीं होता था
लेकिन आदमीं ऐसे तन कर खड़ा
कि पहाड़ ढह गया!
पहले एक नदीं होतीं थीं
एक आदमीं होता था
लेकिन आदमीं ऐसे वेग से बहा
कि नदीं सो गई!पहले एक पेड़ होता था
एक आदमीं होता था
लेकिन आदमीं ऐसे जोर से झूमा
कि पेड़ सूख गया!
पहले एक पृथ्वीं होतीं थीं
एक आदमीं होता था
लेकिन आदमीं इतने जोर से घूमा
कि पृथ्वीं रो पड़ीं!
रो पड़ीं...
कि पहले एक आदमीं होता था
– अजेय

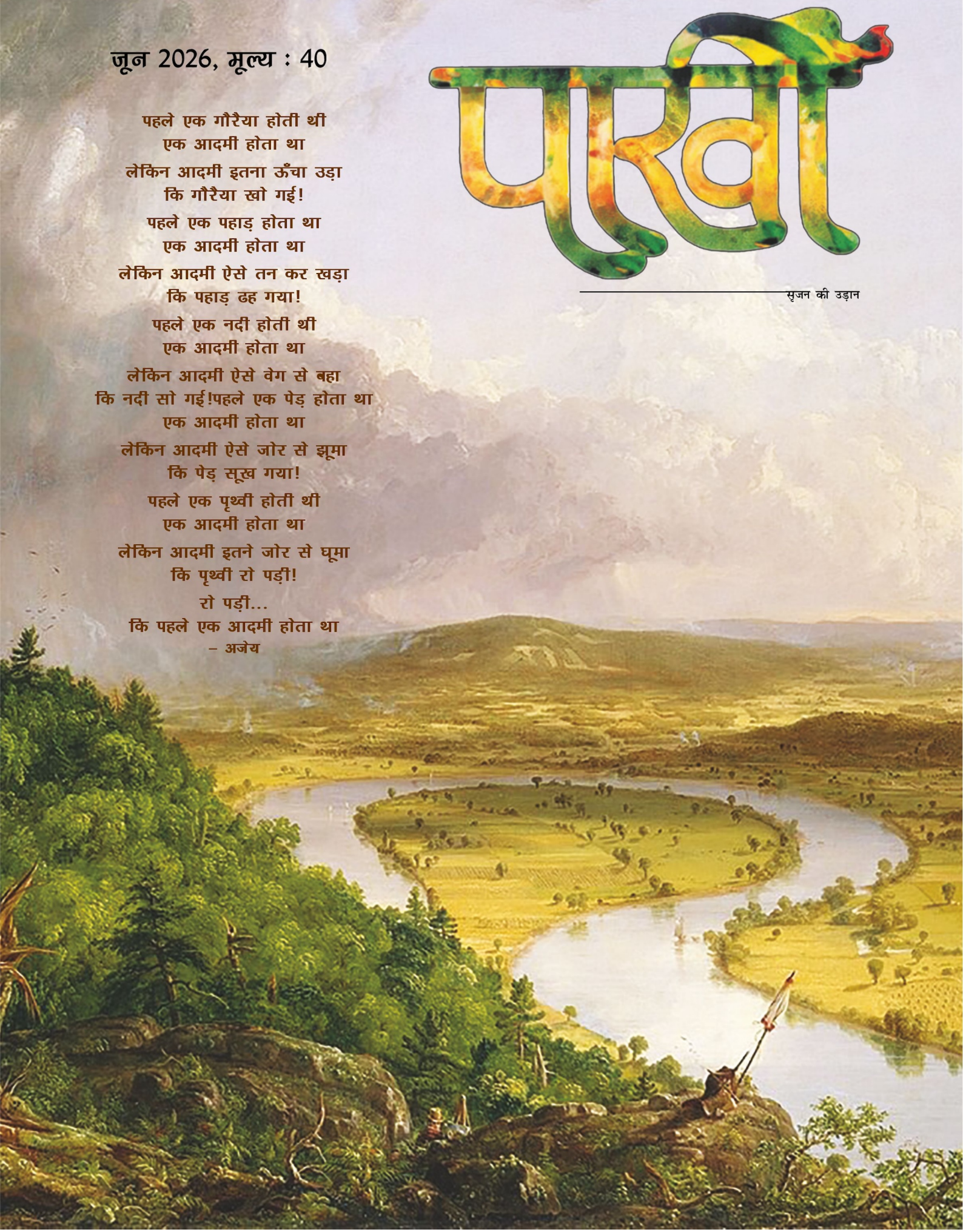

संपादक
अपूर्व

महाप्रबंधक
अमित कुमार

शब्द-संयोजन
उषा ठाकुर

रेखाचित्र : आस्था

वर्ष : 18, अंक 9, जून, 2026

मूल्य :

प्रति	:	रु. 40.00
वार्षिक, रजिस्टर्ड डाक सहित	:	रु. 1000.00
आजीवन, रजिस्टर्ड डाक सहित	:	रु. 10000.00

भुगतान इंडिपेंडेंट मीडिया इनीशिएटिव सोसाइटी के नाम से किया जाए।
भुगतान ऑनलाइन या सीधे बैंक में भी जमा कर सकते हैं।
बैंक : UNION BANK
खाता संख्या : 520101255568785
IFSC : UBIN **0905011**
बैंक शाखा : जी-28, सेक्टर-18, नोएडा-201301
उत्तर प्रदेश

प्रकाशक

इंडिपेंडेंट मीडिया इनीशिएटिव सोसाइटी
बी-107, सेक्टर-63, नोएडा-201309
गौतमबुद्ध नगर, उत्तर प्रदेश
दूरभाष : 0120-4330755
editor@pakhi.in
pakhimagazine@gmail.com
www.facebook.comèpakhimagazine
Web portal : www.pakhi.in

सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रकाशित सामग्री के उपयोग के लिए लेखक और प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। प्रकाशित रचनाओं के विचार से प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अंतर्गत विचारणीय। स्वामित्व इंडिपेंडेंट मीडिया इनिशिएटिव सोसाइटी के लिए प्रकाशक, मुद्रक नारायण सिंह राणा द्वारा चार दिशाएं प्रिंटर्स प्रा.लि. जी-39, नोएडा से मुद्रित एवं बी-107, सेक्टर 63, नोएडा से प्रकाशित।

थॉमस कोल एक एंग्लो-अमेरिकन कलाकार थे जिन्होंने हडसन रिवर स्कूल कला आंदोलन की स्थापना की। आवरण पृष्ठ में दी गई पेंटिंग 'द ऑक्सबो' के नाम से जानी जाती है। 1836 में बनी यह पेंटिंग आंधी के ठीक बाद कनेक्टिकट नदी घाटी के एक रोमांटिक दृश्य को दर्शाती है। इसे जंगल और सभ्यता के बीच टकराव के रूप में व्याख्यायित किया गया है। इस अंक के आवरण पृष्ठ में इस पेंटिंग को विश्व पर्यावरण दिवस के उपलक्ष्य में दिया गया है जो 5 जून को मनाया जाता है।

अनुक्रमणिका

संपादकीय/अपूर्व

हमारे समय की सबसे बड़ी विडंबना 4

चिट्ठी आई है 6

कहानियां/लघु कथाएं

डेथ क्लीनिंग	:	नीला प्रसाद	7
पाकिस्तानी नहीं हूं; मैं!	:	मुख्तार अहमद	13
अब्बाजान	:	अनिल सोनी	17
भूले-बिसरे मुकाम	:	सीमा स्वधा	22
भौं...भौं...भौं...	:	सुधा थपलियाल	27
मेरा जुर्म क्या है?	:	सुशांत सुप्रिय	33
आंदोलन-जीवी *(लघु कथा)*	:	रन्दी सत्यनारायण राव	35
जन्नत की ख्वाहिश *(लघु कथा)*	:	रन्दी सत्यनारायण राव	53
सौदा *(लघु कथा)*	:	सुशांत सुप्रिय	56

कविताएं

यश मालवीय की कविता 36

सावित्री बड़ाईक की कविता 37

पवन माथुर की कविताएं 38

अश्विनी कुमार की कविताएं 40

सारिका भूषण की कविताएं 42

हिमांशु विश्वकर्मा की कविताएं 44

सैयद शबीहा क़ाज़ी की कविता 46

मूल्यांकन

अपनों और सपनों को बचाए रखने की ज़िद : सूरज पालीवाल 48

अपने हिस्से के आसमान की तलाश : संदीप तोमर 51

जड़ता पर प्रहार करता उपन्यास : वंदना गुप्ता 54

यथार्थ के धरातल पर लेखिका का स्मृति पक्ष 'धरा पर धूप' : संजीव कुमार मौर्य 57

आलेख

भगवती चरण वर्मा का स्त्री चिंतन : सरोजिनी नौटियाल 61
लघुकथा के बहाने प्रेमचंद का स्मरण : महावीर रवांल्टा 65
समकालीन कविता की दिशा : अरुण कुमार 70

स्थाई स्तंभ

कल्पित कथन

फ़ैज़ अहमद फ़ैज़ की शाइरी : कपास में आग : कृष्ण कल्पित 75

सत्याग्रह

इसके बाद ये पूछें कि कौन दुश्मन है : प्रियदर्शन 78

पाखी संवाद–जहां शब्द डरते नहीं/प्रतिक्रियाएं

तमिल चेतना, समानता और विद्रोह की कविता 80
सिनेमा, स्मृति और मानवीय गरिमा का आख्यान 81
जहां शब्द डरते नहीं, वहां विचार इतिहास बनाते हैं 82
स्वतंत्र चेतना के महाकवि 84
रंगमंच, प्रतिरोध और आधुनिक भारतीय चेतना की आवाज 88
तर्क, रहस्य और मनुष्य की भीतरी टूटन का कथाकार 90
गीत, प्रतिरोध और आधुनिक संगीत की बदलती आत्मा 92
जासूसी, साम्राज्य और आधुनिक मिथक 'जेम्स बॉन्ड' का निर्माता 93
विरोधाभासों में सत्य खोजने वाला लेखक 95

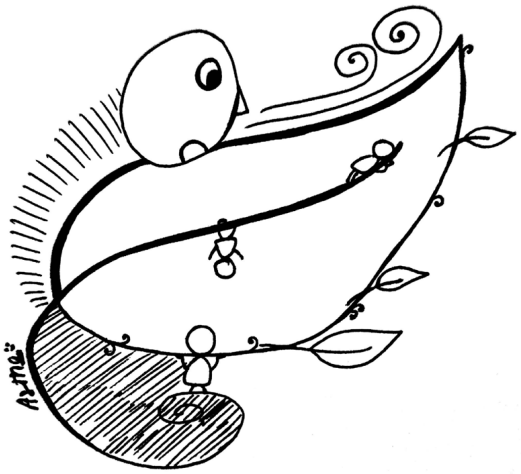

हमारे समय की सबसे बड़ी विडंबना

मैं समाजवादी पार्टी के राष्ट्रीय प्रवक्ता राजकुमार भाटी को लगभग पच्चीस वर्षों से जानता हूं। यह कोई सतही परिचय नहीं है, न किसी राजनीतिक मंच पर हुई औपचारिक मुलाकात। यह उस दौर की पहचान है जब मैं लखनऊ से नोएडा आया था और एक बिल्कुल अलग सामाजिक-सांस्कृतिक भूगोल को समझने की कोशिश कर रहा था। उस समय जिन दो लोगों ने मुझे इस नए शहर में अपनापन दिया, उनमें एक थे दैनिक 'नवभारत टाइम्स' के पत्रकार आदेश भाटी और दूसरे थे राजकुमार भाटी।

उस समय राजकुमार भाटी सिर्फ राजनीति में सक्रिय व्यक्ति नहीं थे। वे पत्रकारिता से भी जुड़े थे और 'देहात मोर्चा' नाम का एक संगठन चलाते थे जो पश्चिमी उत्तर प्रदेश, विशेषकर गौतमबुद्ध नगर और आसपास के इलाकों में किसानों, ग्रामीण समाज और स्थानीय अधिकारों के सवाल उठाता था। वह दौर सोशल मीडिया का नहीं था। लोगों की पहचान टीवी डिबेट्स से नहीं, बल्कि उनके काम से बनती थी। गांव, किसान, जमीन, विस्थापन और स्थानीय अस्मिता जैसे मुद्दे उनके सार्वजनिक जीवन के केंद्र में थे। आज जब बिल्कुल व्यर्थ के आरोपों के चलते राजकुमार भाटी पर मुकद्दमे दर्ज किए जा रहे हैं और सोशल मीडिया पर 'ट्रोल' किया जा रहा है तब उनके बारे में लिखना तो बनता है। एक मित्र के नाते नहीं वरन् एक जागरूक नागरिक के नाते। लेकिन इस प्रसंग को लिखने का उद्देश्य केवल एक व्यक्ति का बचाव भर करना नहीं है। दरअसल, मैं इस पूरे विवाद को भारत की उस गहरी सामाजिक बीमारी के संदर्भ में देख रहा हूं जिसे हमने कभी सचमुच खत्म करने की कोशिश ही नहीं की और वह है 'जाति'।

राजकुमार भाटी को लेकर विवाद इसलिए खड़ा हुआ क्योंकि दिल्ली के जवाहर भवन में आयोजित 'जाति और सांप्रदायिकता के विषाणु' पुस्तक के लोकार्पण कार्यक्रम में दिए गए उनके लगभग 12 मिनट के भाषण में से 7 सेकंड की क्लिप काटकर वायरल कर दी गई। उस क्लिप को इस तरह प्रस्तुत किया गया मानो वे किसी जाति विशेष के खिलाफ घृणा फैला रहे हों। जबकि पूरा भाषण समाज में प्रचलित जातिगत गालियों, अपमानजनक लोकोक्तियों और सामाजिक पूर्वाग्रहों पर केंद्रित था।

मुझे इस विवाद से ज्यादा चिंता उस सामाजिक मानसिकता की है जिसने इस देश को इस मुकाम तक पहुंचाया है कि यहां किसी व्यक्ति के पूरे विचार, पूरे संदर्भ और पूरे व्यक्तित्व को कुछ सेकंड की क्लिप में समेटकर उसकी सार्वजनिक हत्या की जा सकती है। लेकिन यह नई समस्या नहीं है। इसकी जड़ें बहुत गहरी हैं।

भारत में जाति केवल एक सामाजिक संरचना नहीं रही, यह सत्ता की सबसे पुरानी तकनीक रही है। यह तय करती रही कि कौन ज्ञान का अधिकारी होगा, कौन शस्त्र उठाएगा, कौन व्यापार करेगा और कौन जीवन भर सेवा करेगा। यह व्यवस्था केवल श्रम विभाजन नहीं थी जैसा कई लोग सुविधानुसार कहते हैं। यह श्रमिकों का विभाजन भी थी। यह मनुष्यों की गरिमा का विभाजन थी। भीमराव आंबेडकर ने बहुत स्पष्ट शब्दों में कहा कि जाति केवल असमानता नहीं पैदा करती, बल्कि 'graded inequality' पैदा करती है, ऐसी असमानता जिसमें हर व्यक्ति अपने से नीचे वाले को तुच्छ समझता है और अपने से ऊपर वाले के सामने झुकता है। यही कारण है कि जाति व्यवस्था केवल सामाजिक अन्याय नहीं, सामाजिक विखंडन भी पैदा करती है। आंबेडकर ने 'Annihilation of Caste' में लिखा है कि जाति व्यवस्था का सबसे खतरनाक पहलू यह है कि यह समाज को समाज सामूहिक चेतना से वंचित कर देती है। लोग नागरिक कम और जातीय इकाइयां ज्यादा बन जाते हैं। आज भारत में जो कुछ हो रहा है, वह उसी चेतावनी का विस्तार है।

हम एक ऐसे समय में जी रहे हैं जहां जाति खत्म नहीं हुई, बल्कि उसने नए कपड़े पहन लिए हैं। पहले जाति गांव की चौपालों में थी, अब वह सोशल मीडिया के एल्गोरिद्म में है। पहले जाति कुओं और मंदिरों तक सीमित थी, अब वह ट्विटर ट्रेंड्स, व्हाट्सएप ग्रुप्स और यूट्यूब चौनलों में दिखाई देती है। पहले जातिगत घृणा लोककथाओं और कहावतों में थी, अब वह एडिटेड वीडियो क्लिप्स और ट्रोल आर्मी में बदल गई है। राजकुमार भाटी विवाद इसी नए भारत का उदाहरण है।

विडंबना देखिए कि जिस कार्यक्रम में जाति और सांप्रदायिकता के विषाणुओं पर चर्चा हो रही थी, उसी कार्यक्रम के वक्तव्य को काटकर जातीय ध्रुवीकरण का हथियार बना दिया गया। इससे बड़ा प्रमाण और क्या होगा कि हम बीमारी पर चर्चा करने की भी क्षमता खोते जा रहे हैं। समस्या केवल दक्षिणपंथ या वामपंथ की नहीं है। समस्या पूरे समाज की है। आज हर विचारधारा के भीतर जाति मौजूद है। फर्क केवल इतना है कि कोई उसे खुलेआम स्वीकार करता है और कोई